व्याप्ति विचार

प्र०मी० १.२.१०.में अविनाभावका लक्षण है जो वस्तुतः व्याप्ति ही है फिर भी तर्क लक्षणके बाद तर्कविषयरूपसे निर्दिष्ट व्याप्तिका लक्षण इस सूत्रके द्वारा आ० हेमचन्द्रने क्यों किया ऐसा प्रश्न यहाँ होता है। इसका खुलासा यह है कि हेतुबिन्दुविवरणमें अर्चटने प्रयोजन विशेष बतलानेके वास्ते व्याप्यधर्मरूपसे और व्यापकधर्मरूपसे भिन्न-भिन्न व्याप्तिस्वरूपका निदर्शन बड़े आकर्षक ढङ्गसे किया है जिसे देखकर आ० हेमचन्द्रकी चकोर दृष्टि उस अंशको अपनानेका लोभ संवृत कर न सकी। आ० हेमचन्द्रने अर्चटोक्त उस चर्चाको अक्षरशः लेकर प्रस्तुत सूत्र और उसकी वृत्तिमें व्यवस्थित कर दिया है।

अर्चटके सामने प्रश्न था कि व्याप्ति एक प्रकारका संबन्ध है, जो संयोग की तरह द्विष्ठ ही है फिर जैसे एक ही संयोगके दो संबन्धी 'क' और 'ख' अनियतरूपसे अनुयोगी-प्रतियोगी हो सकते हैं वैसे एक व्याप्तिसंबन्धके दो संबन्धी हेतु और साध्य अनियतरूपसे हेतुसाध्य क्यों न हों अर्थात् उनमेंसे अमुक ही गमक और अमुक ही गम्य ऐसा नियम क्यों? इस प्रश्नके आचार्योपनामक किसी तार्किक की ओरसे उठाए जानेका अर्चटने उल्लेख किया है। इसका जवाब अर्चटने, व्याप्तिको संयोगकी तरह एकरूप संबन्ध नहीं पर व्यापकधर्म और व्याप्यधर्मरूपसे विभिन्न स्वरूप बतलाकर, दिया है और कहा है कि अपनी विशिष्ट व्याप्तिके कारण व्याप्य ही गमक होता है तथा अपनी विशिष्ट व्याप्तिके कारण व्यापक ही गम्य होता है। गम्यगमकभाव सर्वत्र अनियत नहीं है जैसे आधाराधेयभाव।

उस पुराने समयमें हेतु-साध्यमें अनियतरूपसे गम्यगमकभावकी आपत्तिको टालनेके वास्ते अर्चट जैसे तार्किकोंने द्विविध व्याप्तिकी कल्पना की पर न्याय-शास्त्रके विकासके साथ ही इस आपत्तिका निराकरण हम दूसरे और विशेषयोग्य प्रकारसे देखते हैं। नव्यन्यायके सूत्रधार गंगेशने चिन्तामणिमें पूर्वपक्षीय और सिद्धान्तरूपसे अनेकविध व्याप्तियोंका निरूपण किया है (चिन्ता० गादा० पृ० १४१–३६०)। पूर्वपक्षीय व्याप्तियोंमें अव्यभिचरितत्वका परिष्कार[1] है जो वस्तुतः

---

१. 'न तावदव्यभिचरितत्वं तद्धि न साध्याभाववदवृत्तित्वम्, साध्यवद्भिन्नसाध्याभाववदवृत्तित्वं.....साध्यवदन्यावृत्तित्वं वा।'—चिन्ता० गादा० पृ० १४१।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अविनाभाव या अर्चटोक्त व्याप्यधर्मरूप है। सिद्धान्तव्याप्तिमें जो व्यापकत्वका परिष्कारांश[1] है वही अर्चटोक्त व्यापकधर्मरूप व्याप्ति है। अर्थात् अर्चटने जिस व्यापकधर्मरूप व्याप्तिको गमकत्वानियामक कहा है उसे गंगेश व्याप्ति ही नहीं कहते, वे उसे व्यापकत्व मात्र कहते हैं और तथाविध व्यापकके सामानाधिकरण्यको ही व्याप्ति कहते हैं[2]। गंगेशका यह निरूपण विशेष सूक्ष्म है। गंगेश जैसे तार्किकोंके अव्यभिचरितत्व, व्यापकत्व आदि विषयक निरूपण आ० हेमचन्द्र की दृष्टिमें आए होते तो उनका भी उपयोग प्रस्तुत प्रकरणमें अवश्य देखा जाता।

व्याप्ति, अविनाभाव, नियतसाहचर्य ये पर्यायशब्द तर्कशास्त्रोंमें प्रसिद्ध हैं। अविनाभावका रूप दिखाकर जो व्याप्तिका स्वरूप कहा जाता है वह तो माणिक्यनन्दी (परी० ३. १७, १८) आदि सभी जैनतार्किकोंके ग्रन्थोंमें देखा जाता है पर अर्चटोक्त नए विचारका संग्रह आ० हेमचन्द्रके सिवाय किसी अन्य जैन तार्किकके ग्रन्थमें देखनेमें नहीं आया।

परार्थानुमान के अवयव

परार्थ अनुमान स्थलमें प्रयोगपरिपाटीके सम्बन्धमें मतभेद है। सांख्य तार्किक प्रतिज्ञा, हेतु, दृष्टान्त इन तीन अवयवोंका ही प्रयोग मानते हैं (माठर० ५)। मीमांसक, वादिदेवके कथनानुसार, तीन अवयवोंका ही प्रयोग मानते हैं (स्याद्वदर० पृ० ५५६)। पर आ० हेमचन्द्र तथा अनन्तवीर्यके कथनानुसार वे चार अवयवोंका प्रयोग मानते हैं (प्रमेयर० ३. ३७)। शालिकनाथ, जो मीमांसक प्रभाकरके अनुगामी हैं उन्होंने प्रकरणपञ्चिकामें (पृ० ८३-८५), तथा पार्थसारथि मिश्रने श्लोकवार्तिककी व्याख्यामें (अनु० श्लो० ५४) मीमांसकसम्मत तीन अवयवोंका ही निदर्शन किया है। वादिदेवका कथन शालिकनाथ तथा पार्थसारथिके अनुसार ही है पर आ० हेमचन्द्र तथा अनन्तवीर्यका नहीं। अगर आ० हेमचन्द्र और अनन्तवीर्य दोनों मीमांसक-

---

१. 'प्रतियोग्यसमानाधिकरणयत्समानाधिकरणात्यन्ताभावप्रतियोगितावच्छेदकावच्छिन्नं यन्न भवति"—चिन्ता० गादा० पृ० ३६१।

२. 'तेन समं तस्य सामानाधिकरण्यं व्याप्तिः ॥'—चिन्ता० गादा० पृ० ३६१।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्मत चतुरवयव कथनमें भ्रान्त नहीं हैं तो समझना चाहिए कि उनके सामने चतुरवयववादकी कोई मीमांसक परम्परा रही हो जिसका उन्होंने निर्देश किया है। नैयायिक पाँच अवयवोंका प्रयोग मानते हैं (१. १. ३२)। बौद्ध तार्किक, अधिक से अधिक हेतु-दृष्टान्त दो का ही प्रयोग मानते हैं (प्रमाणवा० १. २८; स्याद्वादर० पृ० ५५६) और कम से कम केवल हेतुका ही प्रयोग मानते हैं (प्रमाणवा० १. २८)। इस नाना प्रकारके मतभेदके बीच जैन तार्किकोंने अपना मत, जैसा अन्यत्र भी देखा जाता है, वैसे ही अनेकान्त दृष्टिके अनुसार निर्युक्ति-कालसे[1] ही स्थिर किया है। दिगम्बर-श्वेताम्बर सभी जैनाचार्य अवयवप्रयोगमें किसी एक संख्याको न मानकर श्रोताकी न्यूनाधिक योग्यताके अनुसार न्यूनाधिक संख्याको मानते हैं।

माणिक्यनन्दीने कमसे कम प्रतिज्ञा-हेतु इन दो अवयवोंका प्रयोग स्वीकार करके विशिष्ट श्रोता की अपेक्षासे निगमन पर्यन्त पाँच अवययोंका भी प्रयोग स्वीकार किया है (परी० ३. ३७-४६)। आ० हेमचन्द्रके प्रस्तुत सूत्रोंके और उनकी स्वोपज्ञ वृत्तिके शब्दोंसे भी माणिक्यनन्दी कृत सूत्र और उनकी प्रभाचन्द्र आदि कृत वृत्तिका ही उक्त भाव फलित होता है अर्थात् आ० हेमचन्द्र भी कम से कम प्रतिज्ञाहेतु रूप अवयवद्वयको ही स्वीकार करके अन्तमें पाँच अवयवको भी स्वीकार करते हैं; परन्तु वादिदेवका मन्तव्य इससे जुदा है। वादिदेव सूरिने अपनी स्वोपज्ञ व्याख्यामें श्रोताकी विचित्रता बतलाते हुए यहाँ तक मान लिया है कि विशिष्ट अधिकारीके वास्ते केवल हेतुका ही प्रयोग पर्याप्त है (स्याद्वादर० पृ० ५४८), जैसा कि बौद्धोंने भी माना है। अधिकारी विशेषके वास्ते प्रतिज्ञा और हेतु दो, अन्यविध अधिकारीके वास्ते प्रतिज्ञा, हेतु और उदाहरण तीन, इसी तरह अन्यके वास्ते सोपनय चार, या सनिगमन पाँच अवयवोंका प्रयोग स्वीकार किया है (स्याद्वादर० पृ० ५६४)।

इस जगह दिगम्बर परम्पराकी अपेक्षा श्वेताम्बर परम्परा की एक खास विशेषता ध्यान में रखनी चाहिए, जो ऐतिहासिक महत्त्व की है। वह यह है कि किसी भी दिगम्बर आचार्य ने उस अति प्राचीन भद्रबाहुकर्तृक मानी जाने

---

१ 'जिणवयणं सिद्धं चेव भण्णए कत्थई उदाहरणं। आसज्ज उ सोयारं हेऊ वि कहिञ्चि भण्णेज्जा ॥ कत्थइ पञ्चावयवं दसहा वा सव्वहा न पडिसिद्धं न य पुण सव्वं भण्णई हंदी सवियारमक्खायं ।' दश० नि० गा० ४९, ५०।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वाली नियुक्ति में निर्दिष्ट व वर्णित[1] दश अवयवों का, जो वात्स्यायन[2] कथित दश अवयवों से भिन्न हैं, उल्लेख तक नहीं किया है, जब कि सभी श्वेताम्बर तार्किकों (स्याद्वादर० पृ० ५५६) ने उत्कृष्टवाद कथा में अधिकारी विशेषके वास्ते पाँच अवयवों से आगे बढ़कर नियुक्तिगत दस अवयवों के प्रयोग का भी नियुक्ति के ही अनुसार वर्णन किया है। जान पड़ता है इस तफावत का कारण दिगम्बर परम्परा के द्वारा आगम आदि प्राचीन साहित्यका त्यक्त होना—यही है।

एक बात माणिक्यनन्दीने अपने सूत्रमें कही है वह मार्के की जान पड़ती है। सो यह है कि दो और पाँच अवयवोंका प्रयोगभेद प्रदेशकी अपेक्षा से समझना चाहिए अर्थात् वादप्रदेशमें तो दो अवयवोंका प्रयोग नियत है पर शास्त्रप्रदेशमें अधिकारीके अनुसार दो या पाँच अवयवोंका प्रयोग वैकल्पिक है। वादिदेवकी एक खास बात भी स्मरणमें रखने योग्य है। वह यह कि जैसा बौद्ध विशिष्ट विद्वानोंके वास्ते हेतु मात्रका प्रयोग मानते हैं वैसे ही वादिदेव भी विद्वान् अधिकारीके वास्ते एक हेतुमात्रका प्रयोग भी मान लेते हैं। ऐसा स्पष्ट स्वीकार आ० हेमचन्द्र ने नहीं किया है।

---

१ 'ते उ पइन्नविभत्ती हेउविभत्ती विवक्खपडिसेहो दिट्ठतो आसङ्का तप्पडिसेहो निग्गमणं च।'—दश० नि० गा० १३७।

२ 'दशावयववानेके नैयायिका वाक्ये मन्यन्ते—जिज्ञासा संशयः शक्यप्राप्तिः प्रयोजनं संशयव्युदास इति'—न्यायभा० १. १. ३२।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org